मानव मन्दिर

फकीर लायब्रेरी चैरीटेबल ट्रस्ट
सुतेहरी रोड, होशियारपुर
द्वारा अमूल्य भेंट

सम्पादक : सेठ दुर्गा दास

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

मासिक—

मानव मन्दिर

संरक्षक :
परम दयाल पं० फकीरचन्द जी महाराज

सम्पादक :
सेठ दुर्गादास जी

वर्ष ३	आगस्त १९७६	संख्या ४

समाधि

लेखिक :—सेठ दुर्गादास साहिब चण्ड़ीगढ़

स्वामी जी महाराज फरमाते हैं :-

आप आपको आप पहचानो ।
कहा और का नेक न मानौ ।।

पहले आपको चाहिए आप इस बात का पता लेवें कि आप कौन हैं । आपका नाम नानकचन्द है । यह तो आपके शरीर का नाम है । आप तो शरीर नहीं हैं क्योंकि जब डाक्डर क्लोरोफारम देता है या जब आप गहरी नींद में चले जाते हैं तो आपका शरीर काम नहीं करता लेकिन आप जीवित रहते हैं । मौत भी शरीर की होती है । फिर आप शरीर न हुये । यह पूरी तरह सिद्ध हो गया । फिर प्रश्न उठता है आप कौन हैं ? जब आप शरीर नहीं हैं तो आप फरमाते हैं कि आप मन हैं । मन का काम सोचना विचार करना, और इस शरीर की स्थूल और सूक्षं इन्द्रियों से काम लेना है लेकिन मन तो स्वयं सुषुप्ति

की दशा में लोप है। इन्द्रियें काम करना छोड़ देती हैं लेकिन नानकचन्द जीवित है। इसलिए नानकचन्द मन भी न हुआ।

इसलिए स्वामी जी महाराज फरमाते हैं।

"आप आपको आप पहचानो"

भाई साहिब ! आप कौन हैं। इस बात का पता लो। सारी अध्यत्मिकता इस एक बात में छुपी है। यही सार ज्ञान है। नानकचन्द शरीर नहीं, मन नहीं, रूह नहीं और आत्मा नहीं। इन सब से उपर एक सूक्षं तत्व जिसको निरत कहते हैं। क्या आपने कभी निरत के दर्शन किये या आपने कभी अपने आपको पहचाना, जाना या उस अवस्था में ठहरे ?

इस अवस्था का अनुभव वे योगी करते हैं जिनको समाधि की दशा प्राप्त हो जाती है। समाधि योग के साधिक की एक विशेष दशा का नाम है। कई सज्जन सुषुप्ति को समाधि के समान बनाते हैं। लेकिन यह सरासर झूठ बात है। सुषुप्ति में बेखवरी है, अज्ञान है। वेहोशी की दशा सी है। लेकिन समाधि में ग़फलत नहीं है बल्कि ज्ञान रहता है। साधक बाहोश रहता है। केवल शरीर से बेखबरी पैदा हो

जाती है और मन के बोध भान एकाग्र होकर विलीनता की अवस्था पैदा कर देते हैं।

जैसे एक कर्म काण्डी की भी समाधि लग सकती है। एक तसवीर बनाने वाला तसवीर खेच रहा है। तस्वीर की कल्पना उस के मस्तिष्क में है। वह कागज़ पर ध्यान जमाये तसवीर खेंच रहा है। वह उन में सर्व भावेन लीन है। संसार से वेखबर हो गया। शरीर का भान जाता रहा, मन एकाग्र हो गया। उस समय उस पर समाधि की सी हालत चल रही है।

यत्र यत्र मनोगच्छति तत्र तत्र समाधिनाम।

जहां कहीं मन की लगन लग गई। मन समाहित हो गया दिल का लगाना था कि दिल लगी जाती रही। सुमिरन धीरे २ अपजा जाप हो जाता है आजजाप से ही समाधि की हालत पैदा हो जाती है।

ध्यान योग एक पूर्ण योग है। जब ध्यानी, ध्यान और ध्याता में भेद नहीं रहता, उस समय समाधि की हालत पैदा हो जाती है।

सुमिरन से मन लाइये, जैसे कीट भिरंग।
कबीर बिसारे आपको, हो जाय तेही रंग॥

भृंगी एक प्रकार की टिडी है। इसके नर और मादा नहीं होते भृंगी मिट्टी का घरौना सा बनाकर कीड़े को पकड़ लाता है। कीड़े को डंग मारकर घरौने के अन्तर इसको बन्द कर देता है। कीड़ा सोचता रहता है, भृंगी अब भी आया, अब भी आया यूं कीड़ा भृंगी का ध्यान करता रहता है। इसी ध्यान की शक्ति से कीड़ा भृंगी बन जाता है और मार्ग बनाकर बाहर निकल जाता है। यह ध्यान योग का फल है। जो ध्यानयोग में लगे हुए हैं इनको इस बात का भान है कि इनके अन्तर ध्याता जैसी गति आ जाती है। दृष्टि ऐसी ही बन जाती है।

इसके आगे प्रकाशयोग और शब्दयोग हैं। मन की एकाग्रता से मस्तिष्क के विशेष स्थान पर सुरत को ठहराने से प्रकाश प्रकट हो जाता है। प्रकाश का प्रकट होना मानव के मानसिक बल पर अधारित है। ऐसे योग के लिए गुरु का सत्संग, रहन सहन, खान पीन, विशेषकर शारीरिक और मानसिक ब्रह्मचर्य और दूसरी कई बातें आवश्यक हैं।

जो योगी ऐसी समाधि का आनन्द लेते हैं वे कर्मों के बन्धन से आज़ाद हो जाते हैं। इनके मार्ग

से हर प्रकार की रुकावट हट जाती है। कोई डर नहीं रहता। इसका इरादा पक्का हो जाता है। दिल में एकाग्रता रहती है। मन वश में रहता है वे तीन गुणों से उपर रहते हैं। ज़र, ज़न और ज़मीन की इच्छा नहीं रखते। सदा आत्मा में लीन रहते हैं। वे इस संसार में रहते हुये कर्म तो करते हैं लेकिन कर्म के फल की इच्छा नहीं रखते। खुशी और ग़मी इनके दिल पर प्रभाव नहीं डालती। अपने दिल को सदा समता में रखते हैं। इनसे पाप पुन्य छूट जाते हैं। इनको एक समान समझते हैं। वे सदा प्रकाश योग और शव्द की कमाई करते हैं। जन्म मरण के बन्धन से आज़ाद हो जाते हैं और जीवन भर शान्त भाव में रहते हैं। सुनी को अनसुनी कर देते हैं अर्थात ध्यान नहीं देते। मोह लोभ अहंकार और क्रोध के जाल से निकल जाते हैं। अशान्त कभी न होंगे। हर वासना से छुटकारा पा जायेंगे। बुद्धि समता में रहेगीं। न सुख में सुख न दुख में दुख प्रतीत होगा। जज्बे में कभी नहीं आयेंगे। भलाई पर कभी खुश न होंगे। आसक्ति में अनासक्त।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

संसार की कोई वस्तु उन को खैंच नहीं सकती। विषयों में रस नहीं लेते किन्तु ज्ञात में रस लेने की प्रबल इच्छा रहेगी। भावनाओं पर शासन रखते हैं। न किसी से घृणा और न किसी से मोह। इन की आंखों में चमक, सुन्दर मुखड़ा और प्रेम की साक्षात मूर्ति होते है।

परम सुख
ज्ञान का रूप हो जाने में ।
सत्संग हजूर परम दयाल जी महाराज मानवता मन्दिर होशियारपुर

मासिक सत्संग दिनांक १४ मार्च १९७६

राधास्वामी :-ऐ मेरे बनाने वाले और संसार को पैदा करने वाले ! बचपन से तेरी तलाश थी। इस तलाश के सिलसिले में मौज हजूर दाता दयाल महर्षि शिवब्रत लालजी महाराज के चरणों में ले गयी। उस पवित्र विभूति ने मुझे छाती से लगाया। उन्होंने मेरे अवगुण नहीं देखे। मैं उस मालिक को ढूंडता हुआ आ रहा हूं। हजूर दाता दयाल जी महाराज ने मुझे यह काम दिया था। मैं सोचता हूं कि इस को कैसे पूरा करूं। उन्होंने मुझे कहा था

कि तू फकीर बन। ऐ संसार वालो ! मैं सत्य प्रिय व्यक्ति हूं। मैं नाक कटों में शामिल नहीं हुआ। हज़ूर दाता दयाल जी महाराज ने मेरे जिम्मे तीन कार्य बताये थे।

(१) निबल अबल और अज्ञानी जीवों की सहायता करना।

(२) जीवों को भवसागर से पार करना।

(३) जगत कल्याण का कार्य कारना।

पहला प्रश्न तो मैं अपने आप से करता हूं कि क्यों फकीर ! क्या तू भवसागर से पार हो गया ? क्या तेरा कल्याण हो गया ? क्या तेरी निबलता, अवलता और अज्ञानता मिट गई ? मैं अपना क्रियात्मिक पक्ष वर्णन करता हूं। सुनो ! इन सब से परे मैं एक ऐसी अवस्था में चला जाता हूं। जहां न मैं है न तू है। न गुरु है और न चेला है। न राम है न रहीम है न शरीर है न मन है। मगर है सही कुछ। मेरी पिछली आयु आ रही है। अब मैं उसी अवस्था की और जा रहा हूं। ये मेरा कर्म भोग है और हज़ूर दाता दयाल जी महाराज की

आज्ञा है। अब मैं सोचता हूं कि मैं किसी का कल्याण कैसे कर सकता हूं। तुम लोग मेरे पास आते हो। बाहिर जाता हूं तो भी बहुत से लोग मुझे घेरे रहते हैं। मैं अपने आप को उस अवस्था में रखना चाहता हूं जो एक संत या फकीर की होनी चाहिए। वो अवस्था क्या है ?

निज चित सोधें मन परबोधें जीव दोष नहीं दृष्टि।
अपने भाव में वरतें निसदिन, करें दया की वृष्टि॥

ये फकीर के जीवन का परीणाम है। हजूर दाता दयाल जी महाराज ने मेरे नाम एक शब्द में लिखा था।

तू फकीर है मेरे प्यारे सुन फकीर की बानी।
साधू कहें फकीर को भाई साधु जग सुख दानी॥
पर उपकारी जन हितकारी, गुरु के आज्ञाकारी।
अबगुण त्यागी, गुन के ग्राही, दया भाव चित धारी।
निज चित सोधें मन परबोधें, जीव दोष नहि दृष्टि।
अपने भाव मे बरतें निस दिन, करें दया की वृष्टि।

मैंने फकीर बनने के लिए सारी आयु खो दी मगर फकीर मुझे तुम लोगों ने बनाया। जबसे मुझे आप लोगों से यह पता लगा कि मेरा रूप लोगों के

अन्तर जगह २ और देश विदेश में प्रकट होता है, उनके काम कर जाता है और मैं नहीं होता तो मैं सोचने के लिए विवश हो गया कि मेरे अन्तर में भी जितने रूप रंग विचार भाव और शक्लें पैदा होती हैं ये असल में हैं नहीं, ये Suggestions और Impression हैं जो पढ़कर, सुनकर, देखकर और छूकर या प्रालव्य कर्म के अनुसार मेरे मस्तिष्क पर पड़े हुये हैं। यह उनकी छाया है। मैं मालिक को मिलने निकला था। अब जब मैं साधन करता हूं तो इन सब चीजों को छोड़ जाता हूं। आगे हैं प्रकाश और शव्द। क्योंकि मैंने प्रण किया था कि अपना अनुभव कह जाऊंगा और फिर हज़ूर दाता दयाल जी महाराज की आज्ञा थी कि चोला छोड़ने से पहले शिक्षा को बदल जाना। इसलिए मैं अपने कर्म भोगवश घसीटा जा रहा हूं। प्रकृति मुझे किसी ओर घसीट कर ले जा रही है। जो लोग मालिक को मिलना चाहते हैं, उनके लिए मेरा क्या संदेश है ? जो धर्मदास कहता है वही मेरा अनुभव है :-

कैसे मैं आरती करूं तुम्हारी, महा मलिन प्रभु देह हमारी।
छूती से उपजे संसारा, में छूतिया गुन गाऊं तुम्हारा।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

जो मेरा अनुभव है वही धर्मदास का था। क्या अनुभ व निकला ? कि हमारा मन और हमारा जीवन बाहिर के संस्कारों से बनता है। सारा संसार Radiation से बनता है। हरेक चीज़ की Radiation दूसरी चीज़ों पर पड़ती है और हम पर भी पड़ती है। जब तक कोई आदमी इस Radiation खिचाव और संस्कारों से परे नहीं जायेगा वो मालिक को नहीं मिल सकता। क्योंकि सूर्य का खिचाव, पृथ्वी का खिचाव और चांद सितारो का खिचाव हमारे शरीर और मन पर असर डालता है, और दूसरे हमारे एक दूसरे की Radiation और संस्कार एक दूसरे पर पड़ते हैं। इसलिए धर्मदास ठीक कहता है कि हमारी देह मलिन है। विभिन्न प्रकार के संस्कारों के कारण कोई आदमी मालिक को कुछ समझता है कोई कुछ लेकिन वो तो मालिक नहीं है। जब मेरा रूप लोगों के अन्तर प्रकट होता है। और मैं नहीं होता यदि लोग इसे मालिक का रूप समझते हैं तो वे भ्रम में हैं। इसलिए जब तक कोई आदमी अपने मन से या अपने विचार से मालिक को याद करता रहेगा वो मालिक को नहीं

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

मिल सकता। जो रूप किसी के अन्तर प्रकट होता है वो मालिक नहीं है वो उसके संस्कारों, श्रद्धा प्रेम और विश्वास का परिणाण है :-

झरना झरे दशों दिश द्वारे कैसे मैं आऊं साहिब निकट तुम्हारे।

दस द्वारे क्या हैं ? पांच कर्म इद्रिया और पांच ज्ञान इन्द्रियां जब तक किसी की सुरत इन दस इन्द्रियों में है वह दस द्वारों में है इसी का नाम झरना है। हज़ूर बाबा सावन सिंह जी महाराज फरमाया करते थे कि दस द्वारों से आगे जाओ तब आगे सतगुरु मिलेगा। जब तक कोई आदमी दसवें द्वार से आगे नहीं जायेगा या महासुन्न से आगे नहीं जायेगा वह मालिक को नहीं पा सकता। न ही अपने आध घर की ओर जा सकता है। पुरुषोत्तमदास ! बसरे वगदाद में तुम मुझसे कहा करते थे कि कुछ बताओ। अब बता रहा हूं कि जो आदमी मालिक को मिलना चाहता है। जब तक वह Radiation के चक्र से परे नहीं जायेगा अर्थात पांच कर्म इन्द्रियों और पांच ज्ञान इन्द्रियों से परे नहीं जायेगा वह मालिक को नहीं पा सकता। यही सनातन धर्म कहता है और यही राधास्वामी मत कहता है :-

जो प्रभु देवो अग्र की देही तब हम होवें साहिब नाम सनेही।

धर्मदास ठीक कहता है। वह प्रार्थना करता है कि ऐ प्रभु! यदि आप मुझे अग्र की देही दे दो तब मैं मिल सकता हूं। जब तक कोई आदमी प्रकाशमय या नूर रूप नहीं हो जाता वो न ही आगे जा सकता है और न ही मालिक को मिल सकता। अग्र की देह का क्या अर्थ है ? हमारे अन्तर नाना प्रकार की रोशनियां हैं। अग्र की देह है केवल निर्मल और सफेद रंग की रोशनी। क्योंकि अग्र की रोशनी शूक्ष्म पवित्र और बिल्कुल साफ होती। सहस दल कमल में पीले रंग की रोशनी होती है। त्रिकुटी में लाल और सुन्न में चांद की रौशनी जैसी सफेद रोशनी होती है। उसमें कुछ नीलापन होता है। लेकिन वह जो असल प्रकाश है वह केवल सफेद और निर्मल होता है। रोशनी रोशनी में अन्तर होता है। प्रकाश का साधन सब धर्मो में है हिन्दुओं में गायत्री मन्त्र और प्राणायाम् है। ये भी सावित्री अर्थात प्रकाश का साधन है। इत्र लिए हिन्दुओं में बचपन से ही गायत्री मंत्र का साधन बताया जाता था कि तुम प्रकाश को पकड़ो। इसलिए

यदि कोई मालिक को मिलना चाहता है तो उसको पहले प्रकाश मय होन चाहिए। इससे पहले यदि किसी को कोई देवी देवता, गुरु स्वरुप या कोई और दृष्य या कोई और रोशनी नज़र आती है, तो वह रूप उसके अपने बनाये हुए हैं और वे रोशनी भी प्राकृतिक है।

ये भेद मैं इसलिए खोल रहा हूं कि इस समय देश में अनेक प्रकार के धर्म पंथ और गद्दियें हैं। इन गद्दियों और पंथों के कारण और अज्ञान के कारण मानव जाति आपिस में बट गई और एक दूसरे से अपने आपको जुदा समझते हैं और आपिस में द्वेष भाव रखते हैं। हर एक गद्दी वाला अपने आपको सच्चा और दूसरों को झूठा या गलत समझता है। मेरे ज़िम्मे हज़ूर दाता दयाल जी महाराज ने ड्यूटी लगा रखी है।

तेरा रूप है अदभुत अचरज तेरी उतम देही।
जग कल्याण जगत में आया परम दयाल सनेही।

मैंने जगत कल्याण के विचार से इस भेद को खोला है ताकि समझदार लोग मालिक के नाम पर आपिस में लड़ाई झगड़े न करें। और मानव जाति

में एकता हो जाये, एकता पैदा हो। मालिक एक है। मालिक कहां है ? प्रकाश अर्थात ब्रह्म से परे वहां तक जाने के लिए हमें क्या करना चाहिए ? वही करना चाहिए जो धर्मदास कहता है। कोई राधास्वामी नाम को नाम समझता है, कोई पांच नाम को नाम समझता है, कोई राम नाम को, कोई अल्ला को और कोई वाहेगुरु को नाम समझता है। ये सब भूले हुये हैं। नाम उस समय मिलता है जब आदमी अपने आपको पहले प्रकाशमय बनाये, सफेद रंग के प्रकाश में जाये, फिर उससे आगे नाम की प्राप्ति होती है। स्वामी जी महाराज ने फरमाया है।

नाम रहे **चौथे** पद माहीं, ये ढूंडे तरलोकी मांहि।

यह ज़बान से किसी नाम का जाप करना, राधास्वामी नाम का, राम राम का, अल्ला का या वाहेगुरु का। यह गलत नहीं है। ये वर्णात्मिक नाम मन को इकट्ठा करने के लिए हैं। जब तक किसी का मन इकट्ठा नहीं होगा उसके अन्तर प्रकाश पैदा नहीं होगा। शरीर, मन, प्रकाश और शब्द ये हमारे देह हैं। इन में जो असलमें हम हैं वह रहते हैं।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

इसलिए मन को इकट्ठा करने के लिए चाहे राधास्वामी नाम से करो, चाहे राम २ से करो चाहे पांच नाम से करो, अल्लाहू से करो, चाहे वाहेगुरु से करो और चाहे एक दो तीन चार पांच गिनती करके करो। भाव तो मन को इक़ट्ठा करने से है। मैं सच्चाई वर्णन कर रहा हूं। एक गद्दीवाला दूसरी गद्दियों का खण्डन करता है, ये सब कोरे हैं। किसीको सार का पता नहीं और कोई सचाई नहीं बताता। सब हमको अपने पंथ और अपने डेरों में फंसाते हैं। इसका परिणाम यह हुआ कि मानव जाति आपिस में बट गई। सन्तमत आया था संसार में एकता पैदा करने के लिए मगर यह भी बट गया, जगह २ गद्दियें बन गई। इसका परिणाम ? आपिस में द्वेष आ गया। एक गुरु का चोला छोड़ने के बाद उसके कई २ चेले अपनी २ गद्दियां बनाकर एक दूसरे का खण्डन करते हैं।

दाता ! आपने काम दिया था। पता नहीं मैंने जो कुछ किया है और कर रहा हूं, यह ठीक है या ग़लत है मगर मेरी नीयत साफ है। आपकी आज्ञा

का पालन करता हूं और अपना कर्तव्य पूरा करता हूं कोई सुने या न सुने।

सनातनधर्म के अनुसार और धर्मदास के कहने के अनुसार और अपने अनुभव के आधार पर मैं यह कहता हूं कि ऐ मानव ! तू नाम के पीछे दौड़ता है लेकिन नाम कब मिलता है ? नाम प्रकाश से आगे मिलता है। प्रकाश तक पहुंचने के लिए जो साधन हैं जब तक कोई आदमी वह साधन नहीं करता वह प्रकाशमय नहीं हो सकता। वे साधन क्या हैं ? अभ्यास के समय जो विभिन्न प्रकार के रंग रूप शक्लें और विचार तुम्हारे सामने आते हैं वे तुम्हारे मस्तिष्क पर पड़े हुये जो संस्कार होते हैं, उनको दूर करने के लिए अपने अन्तर पहले किसी सरगुण स्वरुप का प्रेम पैदा करो। मां बाप की सेवा का या गुरु की सेवा का प्रेम पैदा करो। पब्लिक की भलाई का प्रेम पैदा करो। जब एक का विचार मस्तिष्क में बैठ जायेगा तो बाकी सब विचार समाप्त हो जायेगे।

एक ही साधे सब सधे, सब साधे सब जाय।

इसलिए नाम को प्राप्त करने के लिए सबसे पहले किसी वस्तु या व्यक्ति से प्रेम है। यह इश्के मजाज़ी है। अर्थात प्रकृति की किसी वस्तु में लय हो जाना इश्के मजाज़ी है। संसार केवल स्त्री के प्रेम को ही इश्के मजाज़ी समझता है। राम या कृष्ण, गुरु या देवी देवता एक की पूजा करोगे तो तुम्हारा मन अनेक संकल्पों को छोड़कर एक खव्त में आ जायेगा और एक अवस्था में ठहर जायेगा और फिर तुमको यदि मालिक को मिलने की खोज है तो फिर प्रकाश से आगे तुमको नाम की प्राप्ति होगी। आजकल लोग एक दो किताबें पढ़कर या तो शेहर लिखना आरम्भ कर देते हैं। और या किताबे लिखना आरम्भ कर देते हैं। उनको नाम की प्राप्ति नहीं होती। नाम की प्राप्ति अमल करने से और साधन अभ्यास से होती है। मेरे पास लोग आते हैं। मैंने कभी किसी से यह नहीं कहा कि तू अपने गुरु का ध्यान छोड़ दे। सरगुण स्वरुप का ध्यान आवश्यक है लेकिन केवल सरगुण तक ही सीमित रहने से तुम भवसागर से पार नहीं जा सकते। जो लोग सारा जीवन हजूर बाबा सावनसिंह जी महाराज का, हजूर

दाता दयाल जी महाराज का, बाबे फकीर का या कृष्णा का ही ध्यान करते मर गये उनको नाम की प्राप्ति नहीं हुई। नाम की प्राप्ति प्रकाश से आगे है। हजूर महाराज ने अपनी प्रेम बाणी में लिखा है कि मरते समय जीव के सामने फिल्म चलती है। जिस गुरु से नाम लिया हुआ होता है वह भी आ जाता है और शब्द भी सुना देता है। उस जीव को भी कुछ समय के लिए ऊपर के लोकों में रहना पड़ेगा, वहां उसको गुरु का दर्शन और सत्संग भी मिलता रहेगा फिर जब कोई समय का संत सत्गुरु इस संसार में आयेगा तो वह जीव भी जन्म लेकर उस संत सत्गुरु के सम्पर्क में आयेगा और बाकी की कमाई पूरी करके अपने आधघर वापिस पहुंच जायेगा।

मैं ऊंचा बोल रहा हूं ।यह मेरे वश की बात नहीं है जिस अवस्था में कोई होता है वह उसी मंजल की बात करता है। नाम की प्राप्ति के लिए जल्दी मत करो। वह व्यक्ति कहता है कि मैं जब अभ्यास करने बैठता हूं तो शरीर पीड़ करने लग जाता है और सुन्न हो जाता है। अरे भाई ! जिसको शरीर से प्यार है उसके लिए नाम नहीं है। प्रारम्भ में तो

शरीर सुन्न होगा ही।

दाता ! यदि मैं भूल में हूं तो मेरा दोष क्षमा होना चाहिए क्योंकि मैंने अपनी नीयत को साफ रखकर काम किया है और अपने निजी स्वार्थ के लिए कोई काम नहीं क़िया। लेकिन मेरे स्पष्ट वर्णन से हानि भी है। एक तो मुझे धन नहीं आता और दूसरे जीवों का जो अन्ध विश्वास है वह टूटता है। लेकिन इसने तो टूटना ही है आज नहीं तो कल या कल नहीं तो दो दिन बाद। जो कुछ मेरे पास है या मैं देना चाहता हूं उसको तो लेने के लिए कोई आता नहीं, जो भी आता है अपने सांसारिक कामों के लिए आता है। किसीके बेटा नहीं है, क़िसी का विवाह नहीं हुआ है, क़ोई बीमार है और किसी का मुक़द्दमा है। यह तो संसार का चक्कर है। नाम वालों का इन चीज़ो से क्या सम्बन्ध ? कर्म का भोग सबको भोगना पड़ता है। बड़े २ सन्त बीमार हुये। उनके लड़के मरे। जब यह भी न बच सके तो फिर हमें करना क्या है ? जब तक शरीर में हो और मन में हो अपनी नीयत को साफ रखकर काम करो। अपने निजी स्वार्थ के लिए

किसी की हानि मत करो। जब तुम्हारी नीयत साफ होगी तो आगे के लिए तुम्हारे कर्म नहीं बनेंगे। लेकिन जो पिछले किये हुये हैं वे तो अवश्य भोगने पड़ेंगे। मैं कई बार सोचा करता हूं कि हुज़ूर दाता दयाल जी महाराज ने मुझे शिक्षा को बदल जाने की आज्ञा दी थी। मैं क्या शिक्षा बदलूं ? जब मैं देखता हूं कि पिछले कर्म सबको भोगने पड़ते हैं तो फिर मैं यही कहता हूं कि ऐ मानव! पिछले कर्म खुशी से भोग और आगे कोई बुरा कर्म न कर ताकि तुम्हारे बुरे कर्म न बनें। यह संसार में रहने का ढंग है और हुज़ूर दाता दयाल जी महाराज ने भी निम्नलिखित शब्द में यही फरमाया है :-

ऐ मेरे प्यारे भाई देखो सम्भल कर चलना।
खोटे कर्म न करना, खोटी न बात कहना।
दुख दोगे दुख मिलेगा सुख दोगे सुख मिलेगा।
मारोगे तुम किसीको फिर ग़म पड़ेगा सहना।
कौल और खियाल करतब दरया से हैं मुशाबा।
तुम देखना न इसकी लहरों में पड़के बहना।
मन इन्द्रियों पे भाई ज़ब्त रखना तुम बराबर।
ज़ाबत बने रहोगे खुशहाल होके रहना।
अपनी निशिस्त रखना तुम आत्मा पे हरदम।
आत्म स्वरुप रहकर संसार में विचरना।

आत्म स्वरुप होना क्या है ? अपने अन्तर में प्रकाश मय होना। परमात्मा प्रकाश स्वरुप है और आत्मा उसकी अंश है। जब आत्मा शरीर में आता है तो मन चित बुद्ध अंहकार पैदा हो जाते हैं। कोई आदमी चाहे लाख अभ्यास करे लेकिन यदि उसका मन शुद्ध नहीं है तो वह प्रकाश को पकड़ नहीं सकता और यदि वह बलपूर्वक पकड़ेगा भी तो उसकी वासनायें बढ़ जायेंगी। इसलिए मैं किसीको नाम नहीं देता। किस को नाम दूं ? नाम का हरेक आदमी अधिकारी नहीं है। तुम्हारे मन में बड़ी भारी शक्ति है। जिस विचार को लेकर सुमिरन ध्यान करोगे प्रकृति के नियम अनुसार तुम्हारी वह आशा पूरी होनी चाहिए। तुमने देखा होगा Mesmerism वाले दिवार पर एक काला निशान लगाकर उसकी ओर प्रतिदिन टिकटिकी लगाकर देखते हैं और चाहते हैं कि यह फूल बन जाये। जब उनको यह निशान फूल की शकल में दिखाई देने लग जाता है तो उस समय उनमें सिद्धी शक्ति आ जाती है। ऐसे ही सुमरिन ध्यान और भजन से जब अभ्यासी की will power बढ़ जाती है तो

यदि उसकी बासनायें गन्दी हैं तो वे बुरी वासनायें उससे बुरा काम अवश्य करायेंगी और उसकी हानि हो जायेगी। मैं इसी लिए सदा सत्संग कराया करता हूं ताकि जीवों को समझ आये और उनको Line of action मिल जाये। यूं तो मेरे बचन ही नामदान हैं।

गुरु बिन माला फेरते, गुरु बिन देते दान।
गुरु बिन नाम हराम है, जा पूछो वेद पुरान।

गुरु नाम है समझ, विवेक और ज्ञान का। यदि समझ के बिना नाम जपोगे तो नाम तुमको खा जायेगा। आजकल गुरुओं ने अपने नाम, अपने मान और अपने डेरों के लिए जो भी आया उसको नाम दे दिया। यह नाम अपने डेरे अपने नाम और अपने चेले बनाने के लिए दिया गया है। प्रकाश को प्राप्त करने के लिए अपने विचारों को शुद्ध रखो, कल्याण कारी विचार रखो और अच्छे विचार रखो। आज जब मैं मंदिर में आया तो विचार आया कि फकीर! तूने यह क्या मकड़ी का जाला बना लिया है। मैं स्वयं इस काम से सुखी नहीं हूं। क्यों? लोग आते हैं किसी का कोई झगड़ा है किसी का कोई

फसाद है, एक दूसरे के विरुद्ध कहते हैं। जो सत्संगी होके इन बातों को भूल नहीं सकता वह काहे का सत्संगी है।

सेवक सेवा में रहे, कभी न मोड़े अंग।
दुख सुख सिर पर सहे, कभी न हो चित्त भंग।

हजूर दाता दयाल जी महाराज ने यह कान करने की मुझे आज्ञा दी थी। मैं हूं सेवक। दुख और सुख अपने सिर पर सहता हूं और निष्कपट होके अपना कर्तव्य करता हूं, जिसकी इच्छा करे मेरे सत्संग में आए जिसकी इच्छा न करे न आए। हजूर दाता दयाल जी महाराज ने मुझे फरमाया था।

तू तो आया नर देही में धर फकीर का भेसा।
दुखी जीव को अंग लगाकर ले जा गुरु के देसा।
तीन ताप से जीव दुखी हैं निबल अबल अज्ञानी।
तेरा काम दया का भाई नाम दान दे दानी।

तुम लोग आये हो अपना जीवन बनाओ। यदि मन गन्दा है तो तुम प्रकाशमय नहीं हो सकते। यदि बलपूर्वक प्रकाश प्रकट करोगे तो हानि उठाओगे जैसे तान्तरिक विद्या वाले साधन करने के बाद दुसरों को हानि पहुंचाते हैं।

मलियागिर पर बसे भवंगा, विष अमृत रहे एको संगा।
तिनका तोड़ दियो परवाना, तब हम पाय साहिब पद
निर्वाना।

मलियागर चन्दन है। इसके साथ सांप लिपटे रहते हैं ऐसे ही हमारे शरीर और मन में और हमारे जीवन में नेकी भी है और बदी भी है। इस नेकी और बदी से कोई भी न बच सका। धर्मदास जी कहते हैं कि "तिनका तोड़ दिया परवाना"। परवाना कहते हैं आज्ञा को। अर्थात गुरु ने मुझे आज्ञा दी कि ऐ फकीर।

यह तो नहीं तेरा देश, देश है विराना।
यहां सब बेगाने बसें, कोई नहीं यगाना।

गुरु ने सत्संग में मुझे समझ दी तो मुझे ज्ञान हो गया कि मैं न शरीर हूं और न मन हूं। मेरा घर प्रकाश से आगे है। शरीर में तो नेकी भी है और बदी भी है। यह त्रिगुणतिमक जगत है। इसी लिए हिन्दुओं ने, मुसलमानों ने और संतों ने प्रकाश मय होने के बारे में कहा। हिन्दु यज्ञ करते हैं। इसका क्या भाव है ? अपने अन्तर ज्योति जलाकर अपने मन के सब विचारों को उसमें जला दो। लेकिन अब अन्तरमुखी तो कोई होता नहीं बाहर में

ही आग जलाकर उसमें आहुतियां डालते रहते हैं। पदनिर्वाण का साधन प्रकाश से आगे है। आगे भी अभ्यास के दर्जे हैं। जिस प्रकार शरीर के चक्कर हैं और मन के चक्कर हैं ऐसे ही आगे भी चक्कर हैं। कबीर साहिब ने तीन शब्दों में इनका वर्णन किया है :-

१. कर नैनों दीदार, महल में प्यारा है।
२. कर नैनों दीदार, यह पिण्ड से न्यारा है।
३. तू सुरत नैन निहार, यह अण्ड के पारा है।

अर्थात वह मन से परे है। स्वामी जी महाराज ने अपने शब्दों में वर्णन किया है और मैंने भी यही कहा। अन्तर केवल शब्दों का है लेकिन भाव एक है।

धनी धर्मदास कबीर बल गाजे, गुरु प्रताप आर्ती साजे।

धर्मदास जी कहते हैं कि मैं कबीर साहिब जी के बल से बोलता हूं ऐसे ही हज़ूर दाता दयाल जी महाराज ने मुझे आज्ञा दी थी कि शिक्षा को बदल जाना। मैं भी उनकी आज्ञा से यह काम कर रहा हूं। इसलिए मेरा किसी पर उपकार नहीं है मेरा तो यह कर्तव्य है। कई बार मुझे यह विचार आता

है कि लोग मेरा ध्यान करते हैं। उनके अन्तर रामे रूप प्रकट होता है और उनके काम कर जाता है। यह क्या मुआमला है ? मैं बाहर जाता हूं। लोग मेरे नाम के कृशमे बताते हैं तो मेरे पांव से मिट्टी निकल जाती है। एक आदमी ने मुझे बताया कि मैं बीमार था। डाक्टरों के पास फिरता रहा लेकिन कोई आराम न आया। फिर मैं धाम पर गया वहां मेरे अन्तर आपका रूप प्रकट हुआ और कहा कि चने खाया करो, तुम ठीक हो जाओगे। मैंने चने खाने आरम्भ कर दिये। अब मुझे ६ महीने से बिल्कुल आराम है। अब मैं सोचता हूं कि मैं तो गया नहीं और न; ही मुझे कोई पता है तो फिर कौन गया ? सब का अपना विश्वास और श्रद्धा है, मैं नहीं जाता। अब वैसाखी के बाद अमेरिका जा रहा हूं। पिछली बार जब अमेरिका गया था तो प्रैज़िडेन्ट निक्सन का बौड़ीगार्ड और दो तीन डाक्टर काफी दूर से हवाई जहाज़ द्वारा मेरे पास आये और कहने लगे कि आपका रूप हमारे अन्तर प्रकट होता है और हमारे कई काम कर जाता है लेकिन मैंने उनसे साफ कह दिया कि मैं नहीं जाता। सब तुम्हारा अपना

ही विश्वास है। वहां मेरे सत्संग में एक आदमी की समाधि लग गई। दूसरे दिन उसने सारा समाचार लिखकर हमें दे दिया। उसने लिखा कि आपका रूप मुझे वहां ले गया, यह कर दिया और वह कर दिया। ऐसी घटनायें सुन कर मैं सदा सोचा करता हूं कि फकीर! ऐसी बातों को सुनकर यदि तू लोगों को सचाई नहीं बतायेगा तो लोग तुमको धन देगें मान प्रतिष्ठा करेंगे। यह धन मान प्रतिष्ठा तुमको खा जायेगी। तभी तो मैं कहता हूं कि ऐ वर्तमान महात्माओं और गुरुओं! गुरु पदवी पर आने से जो अनुभव मुझे हुआ है यदि सचमुच तुम्हारे साथ भी ऐसा ही होता है तो यदि तुम संसार को सच्चाई नहीं बताते और लोगों से गलत ढंग से और उनको अज्ञान में रखकर धन, मान प्रतिष्टा लेते हो तो तुम संसार को लूटते हो और भूल में हो। इसीलिए मैं फकीर के चोले में अवतार लेकर अनामी धाम से संसार को यह बताने के लिए आया हूं कि ऐ मानव जाति! होश कर। तुमको अज्ञान में रखकर लूटा जा रहा है। क्या देवी और क्या देवता, किसी को कुछ नहीं देता। कुछ दिन हुये आप लोगों ने समाचार पत्रों

में पढ़ा होगा कि दो भाई ज्वालाजी हिमाचल प्रदेश गये। देवी की मूर्ती के सामने बड़े भाई ने छोटे भाई का सिर काट दिया। उसने बताया कि देवी ने मुझे तीन बली देने को कहा है। यह अज्ञानता है। न कोई देवी बाहर से किसी को कुछ कहने के लिए आती है और न कोई देवता। न बाबा फकीर किसी के अन्तर कुछ कहने के लिए जाता है और न हजूर बाबा सावनसिंह जी महाराज। जिस प्रकार के संस्कार मस्तिष्क पर पड़े हुये होते हैं वही शकल बनाकर आदमी के सामने आते हैं। क्योंकि जीव निबल अबल और अज्ञानी है, इसलिए मैं आया हूं सत्यता वर्णन करने के लिए। जो कुछ मैं तुमसे कहता हूं यही मेरा नाम दान है जो समझ सकते हैं वे समझें। कल मैंने सत्संग में बताया था कि स्वामी जी महाराज ने चैत्र महीने का वर्णन करते हुए फरयामा है।

सतगुरु सन्त दया करी, भेद बताया गूढ़।
अब सुन जीव न चेतई, तो जानो अति मूढ़।

मैंने अपने आपको समय का सन्त सत्गुरु कहा है। कई बार सोचता हूं कि फकीर! एक दिन मर जाना है, क्या तू लोगों को धोखा तो नहीं देता?

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

नहीं। सतगुरु नाम है सच्चे ज्ञान और सच्ची समझ का और वही मैं संसार को देता हूं। स्वामी जी कहते हैं कि यदि अब भी किसी को समझ नहीं आई तो वह मूढ़ है। मैं कई बार अपने आपसे यह प्रश्न भी किया करता हूं कि तुम्हें लोगों को उपदेश करने का क्या अधिकार है? कोई नहीं। क्योंकि हज़ूर दाता दयाल जी महाराज ने मुझे आज्ञा दी थी कि फकीर निबल अबल, अज्ञानी जीवों की सहायता करना और जीवों को भवसागर से पार जाने के लिए उनकी सहायता करना और जगत कल्याण का काम करना। इसलिए मैंने जो स्वयं अनुभव किया है वह लोगों को बताता रहता हूं। यदि मान लो कि यह ग़लत है तो मैं दोषी नहीं हूं क्योंकि हज़ूर दाता दयाल जी जी महाराज ने मुझे इस काम को करने की आज्ञा दी थी और फिर जब मैं हज़ूर बाबा सावनसिंह जी महाराज के पास १९४२ में गया था तो उन्होंने फरमाया था कि फकीर! मुझसे सच्चाई वर्णन नहीं हो सकी क्योंकि जीव अधिकारी नहीं। तुम निर्भय होके काम कर जाओ मैं तुम्हारा संरक्षक रहूंगा। जो कुछ मैंने जीवन में समझा उसकी पुष्टि बाणी

करती है। आप लोग आ जाते हैं। जहां तक हो सके अपनी नीयत को साफ रखो। अपने निजी स्वार्थ के लिए किसी से हेरा फेरी मत करो। धोखा मत करो। यही मैंने सारा जीवन किया है।

मैं अपना कर्म भोगता हूं। मैंने Free Eye Hospital बनाया। मन्दिर में जो रुपया आता है उसके लिए यह नियम है कि उसको उचित ढंग से एक उचित सीमा तक खर्च किया जाये। हस्पताल तो मैंने खोल दिया लेकिन इसका खर्च बहुत है। यद्यपि बहुत बड़े २ और धनी आदमी मेरे जानकार हैं लेकिन मैं किसी को कहना नहीं चाहता क्योंकि मुझे मांगने की आदत नहीं है। यदि चलेगा तो जलाऊंगा बरना बन्द कर दूंगा। यदि खुशी से कोई देना चाहता है तो बड़ी खुशी से दे।

निज चित सोधें मन परवाधें, जीव दोष नहिं दृष्टि।
अपने भाव में वरते निस दिन, करे दया की वृष्टि

मुझे अपने भाव में आपने पहुंचाया। अब वहां रहने का यत्न करता हूं और चाहता हूं कि जो दुखी मेरे पास आयें वे सुखी हो जायें। मैं केवल यही कुछ कर सकता। हो सकता है कि मेरी शुभ भावना

लोगों की सहायता करती हों लेकिन मैं किसी के अन्तर नहीं जाता। यदि ये बड़े २ महात्मा भी सचमुच नहीं जाते थे या मोजूदा महात्मा भी नहीं जाते हैं और उन्होंने परदा रखा और लोगों को अज्ञान में रखकर उनसे झूठी मान प्रतिष्ठा और धन लिए हैं तो तुम तो कहोगे कि वे सतलोक गये मगर मैं कहना नहीं चाहता। क्या कहूं ? केवल इतना ही कहता हूं कि उन्होंने संसार को धोखा दिया है। यह धोखा नहीं तो और क्या है। इस सच्चाई को खुले शब्दों में पब्लिक में न स्वामी जी महाराज ने कहा है और न कबीर साहिब ने कहा है। कबीर साहिब ने धर्मदास को यह भेद बताया मगर साथ ही यह कह दिया।

धर्मदास तोहे लाख दुहाई, सार भेद बाहर नहीं जाई।

स्वामी जी महाराज ने अपनी बाणी में फरमाया है।

संत बिना कोई भेद न जाने, वो तोहे कहें अलग में।

उन्होंने क्यों परदा रखा ? उस समय विदेशी शासन था कबीर साहिब ने एक शब्द में लिखा है।

सांच कहूं तो मारसी, यह तुरकानी जोर।
बात कहूं परलोक की, कर गह पकड़े चोर।

पिछला समय और था। अब हमारा राज है इसलिए इस परदे को जो पिछले सन्तों ने रखा अब खोलने की आवश्यकता है ताकि भारत वर्ष में धार्मिक और पंथिक एकता पैदा हो ।

सब को राधास्वामी

सत्संग हजूर परम दयाल जी महाराज मानवता मन्दिर होशियारपुर

दिनांक २८ मार्च १९७६

सुरत तू दुखी रहे हम जानो ।
जा दिन से तुम शब्द विसारा, मन संग यारी ठानी ।
मन मूरख तन साथ बंधानी, इन्द्री स्वाद लुभानी ।
कुल परिवार सभी दुखदाई, इन संग रहत भुलानी ।
तू चेतन यह जड़ सब मिथ्या, क्योंकर मेल मिलानी ।
ताते चेत चलो यह औसर, नहिं भरमो तुम खानी ।
सतसंग करो सतपद खोजो, सतगुरु प्रीत समानी ।
नाम रतन गुरु देयं बुझाई, उलट चढ़ो असमानी ।
इतना काम करो तुम अबके, फिर आगे की सतगुरु जानी ।

राधास्वामी । मैं अपने आपसे पूछता हूं कि ऐ फकीर ! तुमको सन्तमत में आकर क्या मिला ? ये बाणियें सुना करता था तो मेरे दिल में

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

जज्बा पैदा होता था कि जो कुछ सन्तों ने कहा है उसको मैं भी देखूं और उस मालिक से मिलूं। सन्तों ने यह "सुरत" का शब्द नया निकाला है जो पिछले ऋषि मुनियों ने नहीं कहा, उन्होंने आत्मा का शब्द प्रयोग किया है। मैंने क्या समझा ? यह समझ मुझे तुम लोगों से आई। जब से तुम लोगों से पता लगा कि मेरा रूप तुम्हारे अन्तर प्रकट होकर, तुम्हारे काम कर जाता है और मैं तो होता नहीं तो मेरा जीवन बदल गया। सुरत वह चीज़ है जो मेरे अन्तर में प्रकाश में रहती हुई प्रकाश को देखती है और शब्द में रहती हुई शब्द को सुनती है। सनातनधर्म वाले उसको आत्मा कहते हैं। लेकिन मैं यह समझता हूं कि जब वह सुरत नूरी हो जाती है तो वह आत्मा है जब उसमें विचार आ जाते हैं तो वह मन कहलाती है और जब उसमें शारीरिक बोध भान आ जाते हैं तो वही शरीर है। लेकिन वह चीज़ शरीर मन और आत्मा से अलग है। जब हम समाधि में चले जाते हैं तो हमको उस समय न शरीर का बोध होता है और न मन का बोध होता है मगर वह चीज़ रहती है। प्रकाश में जो वस्तु रहती है वह

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

है सुरत । मैं सोचता हूं कि फकीर ! गुरु बन गया लोगों को उपदेश भी करते हो, शब्द सुनते हो । यह बताओ कि क्या अब तुमको दुख नहीं होता ? होता है । मैं इन राधास्वामी मत वालों से या दूसरे महात्माओं से प्रश्न करता हूं कि तुम शब्द अभ्यास करते हो और लोगों को शब्द अभ्यास देते हैं, क्या फिर तुम दुखी नहीं होते ? मैंने बीनें सुनी, अपने अन्तर सूर्य चान्द सितारे देखे । क्या फिर मैं कामी नहीं हुआ ? हुआ । क्या मुझे क्रोध नहीं आया ? आया । जब मेरे स्टाफ के आदमी ग़लती करते या कोई हानि करते तो मुझे क्रोध आ जाता था । मुझे तो क्या हज़ूर बाबा सावनसिंह जी महाराज सत्संगियों को सोटी से मारा करते थे । यह मैंने स्वयं देखा है । तो फिर वह कौन सा शब्द है जिसके सुनने से हम दुखी नहीं होते ।

सुरत तू दुखी रहे हम जानी ।
जा दिन से तुम शब्द विसारा, मन संग यारी ठानी ।

हम दुखी इसलिए होते हैं कि हमने मन के साथ Attachment रखी हुई है । मन के साथ हमने अपना सम्बन्ध रखा हुआ है । जब तक शरीर है तब तक

चाहे कबीर साहिब हो, चाहे राधास्वामी दयाल हो, चाहे कोई और गुरु हो, कोई यह नहीं कह सकता कि मन साथ नहीं है। इस समय मैं सत्संग करा रहा हूं क्या मन के बिना करा रहा हूं ? अपने आपसे पूछता हूं कि क्या तू दुखी नहीं होता ? यदि होता है तो फिर इस बाणी को पढ़कर क्या करेगा। यह क्रियात्मिक जीवन है। ७१ साल के बाद अब समझ आई कि सुरत-शब्द-योग क्या है। संसार ग़ाफिल है। सुरत शब्द योग के बाद एक अनुभव पैदा होता है। यही स्वामी जी महाराज फरमाते हैं।

सुरत शब्द दोऊं अनुभव रुपा।
तू तो पड़ा भरम के कूपा।

मुझे सुरत शब्द से क्या मिला और मैं कैसे सुखी होता हूं ? मैंने प्रण किया था कि अपना अनुभव कह जाऊंगा मगर मुझे दावा किसी बात का नहीं कि जो कुछ मैं कहता हूं वही सच है। यदि कबीर साहिब को या स्वामी जी महाराज को या दूसरे सन्तों को बाणी कहने का अधिकार था तो मुझे भी है। सिवाय छोटी आयु के विवाह के मैंने इस जन्म में कोई पाप नहीं किया। जिस प्रकार मेरा रूप

लोगों के अन्तर प्रगट होता है और उनके काम कर जाता है, मैं यदि परदा रखता तो लोगों को लूटकर खा जाता। कई बार किसी को कुछ कह देता हूं तो मालिक की मौज से वह पूरा हो जाता है। मैं यह समझता हूं कि उस शब्द को केवल सुरत सुनती है। वहां मन चित और बुद्धि नहीं जा सकते। अब मुझे आप लोगों के अनुभवों के कारण ज्ञान हुआ तो क्योंकि मैं सत्य प्रिय व्यक्ति हूं और सच्चाई का खोजी था इसलिए मैंने मन से आगे जाने का यत्न किया। जब आगे यह खोज करता हूं कि मेरा अपना रूप क्या है तो शब्द भी लोप हो जाता है क्योंकि सुरत वहां से हट जाती है तो फिर बाकी क्या रह जाता है ? समझ नहीं आती वहां ठहरा नहीं जाता। उस अवस्था में जाने से यह अनुभव हो जाता है कि मैं न शरीर हूं न मन हूं न प्रकाश हूं और न शब्द हूं। मैं तो राम को मिलने निकला था पहले सरगुण स्वरुप की उपासना करता था, प्रेम करता था फिर ज्ञान ध्यान भी करता रहा। जब आगे जाता हूं तो प्रकाश भी और शब्द भी लोप हो जाते हैं। यही स्वामी जी ने कहा है।

शब्द गुप्त तब रहा अनाम, शब्द प्रगट तब धरया नाम।

वहां मुझे क्या मिला ? नीचे आने से फिर कई बार दुखी हो जाता हूं। इस दुख से मुझे किसने छुड़ाया ? इस अनुभव ने कि मैं न शरीर हूं, न मन हूं, न प्रकाश हूं और न शब्द हूं। यह मेरी प्रकृति है। अब मैं नीचे आता हूं। दृश्य देखता हूं मगर इनको सच नहीं मानता। इनसे मैं यारी नहीं रखता इनसे मेरी कोई Attachment नहीं है। मैं कुछ कहना चाहता हूं मगर मुझे शब्द नहीं मिलते। क्योंकि मैंने अपने आपको Realise कर लिया है इस लिए मैं आपके साथ यारी नहीं रखता। मन के अन्तर कोई न कोई संकल्प उठता ही रहता है लेकिन यदि मैं अपने रूप को या गुरु को भूल जाता हूं तो मैं फंस जाता हूं। गुरु है ज्ञान। बाबे फकीर का या किसी और आदमी का चेहरा गुरु नहीं है। यह ज्ञान कि फकीर! तू न शरीर है, न मन है, न प्रकाश है और न शब्द है तू अनामी की अंश है, परम तत्व की अंश है अकाल पुरष की अंश है, इस अपने रूप के ज्ञान से मैं दुख से बचता हूं। जब भूल जाता हूं तो फंस जाता हूं। मैं कहा करता हूं कि मैं गिर जाता हूं जब ज्ञान को

भूलकर मैं मन के विचारों को सत मानता हूं तब मैं फंस जाता हूं। यही सनातन धर्म की शिक्षा है। वह जो हमारी अवस्था है जो प्रकाश में रहती हुई प्रकाश को देखती है और शब्द में रहती हुई शब्द को सुनती है उस अवस्था में ज़हूर नहीं है और यही शास्त्र कहते हैं कि सत को असत ने ढक रखा है अर्थात हमारी वह चीज़ जो प्रकाश को देखती और शब्द को सुनती है वह सत है। उसमें न रूप है और न रंग है। वह है हमारी ज़ात। हमारा प्राकट्य पहले असत में था फिर वहां से नीचे आया इसलिए राधास्वामीमत में और सनातन धर्म में कोई अन्तर नहीं है। न सनानत धर्म वालों को सनातन धर्म का ज्ञान है और न राधास्वामियों को असलियत का ज्ञान है। लोग कर्म काण्ड और वेदान्त में फंस गए। अब मैं गुरु का काम करता हूं और असलियत जो मेरी समझ में आयी है वह वर्णन करता हूं, इसलिए मेरी आत्मा पर गुरु बनने का न कोई पाप है और न ही कोई बोझ है। गुरु नाम है ज्ञान का।

गुरु ज्ञान न पाओ री सखी तेरी ऐवें उमर विहानी।

ज्ञान यह है कि ऐ सुरत तू मालिक की अंश है Evolution के सिलसिले में यहां आके फंस गई। गुरु मिले और तुमको विधि बताई। इस गति को केवल ब्राह्मण ही प्राप्त कर सकता है, दुसरा नहीं। ब्राह्मण कौन है? ब्राह्मण वह है जो मन से ऊपर जाकर प्रकाशमय रहता है चाहे वह किसी जाति से सम्बन्ध रखता हो। यदि कोई आदमी जन्म से ब्राह्मण है लेकिन वह प्रकाशमय नहीं होता तो वह ब्राह्मण नहीं है। ब्राह्मण वह है जो ब्रह्म में रमण करता है। जो आदमी दूसरी जातियों के होते हुये भी ब्राह्ममय हुये उनका कितना मान हुआ। उदाहरण के रूप में बालमीकी जी, विधुर जी और रविदास जी। बड़े २ राजे महाराजे उनके चेले थे। क्षत्री वह है जो अपने मन के साथ संघर्श करता है, वैश्य वह है जो अपने शरीर को पालता और उसकी रखवाली करता है। शूदर वह है जिसकी दृष्टि बाहिर के संसार की ओर है। जिसकी सुरत या दिल अपनी असलियत की ओर नहीं जाता। ऐसा आदमी ब्राह्मण होता हुआ भी शूदर है। जब तक कोई आदमी प्रकाशमय नहीं होता तब तक वह अभ्यास में बातें ही करता रहेगा या

गुरु स्वरुप में ही रहेगा। वह अपने आपको देख नहीं सकता। इसलिए श्री धर्मदास जी ने लिखा है :-

कैसे मैं आरती करूं तुम्हारी, महा मलिन प्रभु देह हमारी।

वह कहते हैं कि मेरे मन में भी गन्दे विचार हैं और मेरा शरीर भी मलिन है इसलिए मैं आपकी आरती या आपकी भक्ति कैसे करूं। शरीर तीन प्रकार के हैं। स्थूल, सूक्ष्म और कारण। वह जो चौथी चीज़ इन तीन प्रकार के शरीरों में रहती है उसको न तो वह प्राप्त कर सकता है जो मन के साथ संघर्ष करता और न ही वह प्राप्त कर सकता है जो अपने शरीर की पूजा या रखवाली करता है और न ही वह प्राप्त कर सकता है जिसकी दृष्टि बाहिर के संसार की ओर लगी रहती है। इसको वह प्राप्त कर सकता है जो ब्रह्ममय हो सकता है। उसका नाम ब्राह्मण है। इसलिए कहा गया है कि उस अवस्था को केवल ब्राह्मण ही प्राप्त कर सकता है। धर्मदास जी ने इसीलिए कहा है कि ऐ मालिक! मैं आपकी स्तुति नहीं कर सकता क्योंकि मेरा शरीर मलिन है।

छूती से उपजे संसारा, मैं छूतिया गुण गाऊं तुम्हारा।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

हम शरीर में रहकर ही और मन के साथ ही प्रार्थना करते हैं। जो मन में रहता है वह प्रकाश को नहीं पकड़ सकता। यही गायत्री मंत्र है कि सावित्री को पकड़ो अर्थात प्रकाश को पकड़ो। इसलिए दुख कब दूर होते हैं ? पहले शरीर को छोड़ो फिर मन को छोड़ो फिर उस चीज़ की तलाश करो जो प्रकाश में रहती हुई प्रकाश को देखती है और शब्द में रहती हुई शब्द को सुनती है। फिर जब उसको ज्ञान और अनुभव हो जाता है तब वह उस ज्ञान और अनुभव के कारण दुख को महसूस नहीं करता। यही सन्त कहते हैं।

तीन सुन्न के पारा. वह है देश हमारा।

धर्मदास जी फिर कहते हैं :-

झरना झरे दशों दिश द्वारे, कैसे मैं आऊं साहिब निकट तुम्हारे।

हमारे मन में हर समय कोई न कोई विचार उठता रहता है। यही झरना है। जब तक कोई आदमी मन से भक्ति करता है। वह मंज़ल पर नहीं पहुंच सकता। बाबे फकीर का ध्यान करने से या किसी और गुरु का ध्यान करने से या राम या कृष्ण या किसी देवी देवते का ध्यान करने से तुमको मान प्रतिष्टा मिल जायेगी, रिद्धि सिद्धि आ जायेगी, तुम्हारे

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

सांसारिक काम होते जायेंगे मगर तुम अपने घर नहीं जा सकते। इसलिए स्वामी जी महाराज ने लिखा है।

भक्त उपासक योगी ज्ञानी, इन सब चक्कर खाया।

इन बाणियों को सुनकर मैं सोचा करता था कि ऐ मालिक ! मैं तो तुमको मिलने निकला था। कहां फंस गया ? लेकिन मेरा विश्वास हजूर दाता दयाल जी महाराज से नहीं टूटा था। यदि मैं पहले यह बाणियें पढ़ लेता तो मैं शायद सन्तमत में न आता। तो उस समय मैंने यह प्रण किया था कि इस मार्ग पर सच्चा होकर चलूंगा और जो मेरा अनुभव होगा वह संसार को बता जाऊंगा। हजूर दाता दयाल जी महाराज ने मुझे आज्ञा दी थी कि चोला छोड़ने से पहले शिक्षा को बदल जाना। इसलिए मैं यह जो काम करता हूं, यह अपना कर्म भोगता हूं। किसी पर मेरा कोई उपकार नहीं है। आप लोग आ जाते हैं तो मुझे अपना कर्म भोगने का अवसर मिल जाता है। आप लोग मेरे सच्चे सतगुरु हो और मेरे कर्म कटाते हो।

जो प्रभु देवो अग्र की देही, तब हम होवें साहिब नाम सनेही।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

अग्रबत्ती की रौशनी तेज़, सफेद और सुगन्ध देने वाली होती है। उनका भाव प्रकाश से है। जब तक कोई अपने अन्तर में प्रकाशमय नहीं होता वह आगे नहीं जा सकता चाहे वह लाख यत्न करे। लोग अपने अन्तर मैं कई प्रकार के शब्द सुनते हैं। कोई घूं घूं की आबाज़ सुनता है, किसीके अन्तर चूं चूं सुनाई देता है, कोई घण्टा, शंख और मृदंग की आवाज़ अपने अन्तर सुनते हैं। ये सब प्राकृतिक शब्द हैं। इनकी व्याख्या कि ये क्यों बजते हैं मैंने पांच नाम और पांच स्थान नामी पुस्तक में की है।

मलियागिर पर वसे भवंगा, विष अमृत रहे एको संगा।
तिनका तोड़ दियो परवाना, तब हम पायो साहिब पंद निर्वाना

मलयागिर अर्थात चन्दन में सुगन्ध होती है और उसके साथ सांप लिपटे रहते हैं अर्थात हमारे मन में नेकी भी है और बदी भी है। इस शरीर में अच्छाई भी है और बुराई भी है। जब तक अच्छाई और बुराई है तब तक आगे नहीं जा सकते। धर्मदास जी फरमाते हैं कि गुरु मिले, ज्ञान दिया और आगे जाने का मार्ग मिल गया।

सुरत तू दुखी रहे हम जानी।
जा दिन से तुम शब्द विसारा, मन संग यारी ठानी।

सो मैं तो भई इस विधि से तरा लेकिन फिर भी जब गुरु ज्ञान को भूल जाता हूं तो फंस जाता हूं और दुख और सुख उठाता हूं । जब तक ज्ञान रहता है तब तक न दुख और न सुख। अब बात को समझ गया और अब इसमें परिपक्व होने का यत्न करता रहता हूं । अब मैं इस ज्ञान का रूप होने का यत्न करता रहता हूं।

मन मूरख तन साथ बन्धानी, इन्द्री स्वाद लुभानी।

जब अपने रुप का ज्ञान हो जायेगा तब तुम इस दुख और सुख से बच सकोगे। फिर उस रूप के ज्ञान के आधार पर अपना जीवन व्यतीत करोगे। लोग कहते हैं कि हर समय शब्द में रहो। अरे दीवानो ! ये केवल बातें ही बातें हैं। शब्द योग का अर्थ है अनुभव प्राप्त करना। शब्द योग लक्ष्यपद नहीं है। यह तो मंज़ल तक पहुंचने के लिए एक मार्ग है। सन्त कृपालसिंह जी भी यही कहा करते थे कि साधन End नहीं है It is means to end । हजूर दाता दयाल जी महाराज भी फरमाया करते थे।

एक जन्म गुरु भक्ति कर, जन्म दूसरे नाम।
जन्म तीसरे मुक्ति पद, चौथे में निज धाम॥

कुछ समय गुरु के सत्संग में जाके बात को समझो फिर प्रकाश और शब्द को पकड़ो। जब ज्ञान हो जाये तो फिर उस अवस्था में रहना और जगत में न फंसना ही मुक्ति है। मरने के बाद क्या होगा ? यह पता नहीं। चाहता हूं कि मरने के बाद यदि निकल कर कहीं बाहर जाऊं तो बता सकूं कि मैं कहां गया। मेरी गुरु भक्ति और नाम भक्ति तो पूरी हो गयी अब मुक्ति पद में रहता हूं। लेकिन कभी गिर भी जाता हूं।

हजूर दाता दयाल जी महाराज फरमाया करते थे कि यह केवल छः महीने का कोर्स है लेकिन मैं कहता हूं कि यह केवल छः हफते का कोर्स है, शर्त यह है कि आदमी के दिल में परमार्थ की इच्छा हो और संसार की ओर से उपराम हो चुका हो। फिर वह बात को शीघ्र ही समझ जाता है और Realisation कर जाता है। आदमी की सुरत इसलिए नहीं चढ़ती क्योंकि वह सांसरिक आशाओं में फंसी हुई है। नामदान तो उनके लिए है।

विषयन से जो होय उदासा, परमारथ की या मन आशा ।
धन संतान प्रीत नहिं जाके, खोजत फिरे साध गुरु जागे ॥

इसलिए हर एक आदमी नाम का अधिकारी नहीं। लेकिन इस समय बहुत लोग नामधारी हैं। सन्तों ने बीज डाल दिया है कोई समय आयेगा जब यह नाम फलेगा। क्योंकि हर एक आदमी नाम का अधिकारी नहीं इसलिए मैं नाम नहीं देता और सत्संग कराता हूं। यदि मेरी बात को कोई समझ जाता है तो फिर वह भटका नहीं खाता।

कुल परिवार सभी दुखदाई, इन संग रहत भुलानी।

लोग कहते हैं कि मां बाप, भाई बहन, बाल बच्चे और स्त्री यह हमारा संसार है लेकिन मैं यह समझता हूं कि हमारे मन के अन्तर जो विचार उठते हैं, जो हमको आगे जाने नहीं देते, वह हमारा संसार है। वह हमारा परिवार है। हमारा परिवार हमारे मन में रहता है। जिसको मन के रूप का पता लग जाता है वह इसमें नहीं फंसता।

तू चेतन यह जड़ सब मिथ्या, क्योंकर मेल मिलानी।

हमारी सुरत चेतन है। शरीर चेतन नहीं है। जब सुरत शरीर में आती है तब तुम चेतन हो।

सुरत सबसे जुदा है। उसका ब्रह्म या पारब्रह्म से कोई सम्बन्ध नहीं है। इसलिए स्वामी जी ने कहा है कि संत ईश्वर परमेश्वर के पैदा करने वाले हैं और इनसे बड़े हैं। क्योंकि सुरत इन सब को पैदा करने वाली है। जब सुरत अन्तर में आती है तभी तुम प्रकाश को देखते हो और तब ही मन संकल्प करता है।

ऐ मानव ! तेरी बहुत बड़ी बड़ाई है। तू सबसे बड़ा है। क्योंकि तुमको गुरु नहीं मिला और तुमको अपने रूप का ज्ञान नहीं है इसलिए तुमने मन के साथ यारी लगा रखी है और हाय २ करते रहते हो।

ताते चेत चलो यह औसर. नहिं भरमो तुम खानी।

मानव का दरजा रचना में सबसे ऊंचा है। तुमको शरीर मिला है अब होश करो और यदि होश नहीं करोगे तो क्योंकि तुम्हारी सुरत शरीर और मन के साथ लगी हुई है इसलिए मरते समय जैसे तुम्हारे विचार होंगे उसके अनुसार ही तुमको जन्म मिलेगा। मुझे अपना कोई दावा नहीं "नथ खसम दे हथ" रेल और तार तो अब तक मेरे स्वप्न में आते हैं। लेकिन

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

न कभी यह मन्दिर मेरे स्वप्न में आया और न ही कभी आप लोग आये। इसलिए क्या पता मेरा क्या परिणाम होगा। क्योंकि मेरे जिम्मे कर्तव्य है इसलिए मैं यह काम करता हूं यदि नहीं करता तो गुरु आज्ञा से बेमुख होता हूं।

सतसंग करो सत पद खोजो, सतगुरु प्रीत समानी।

यदि तुम गुरु से प्रेम करोगे तो वह तुमको सतपद खोजने का मार्ग बतायेगा। यदि केवल प्रीत ही करते रहोगे और खोज नहीं करोगे तो क्या मिलेगा? केवल अस्थाई आनन्द। केवल गुरु की सेवा करने से या प्रेम करने से या रुपया देने से तुम सतपद को नहीं पा सकते। सतपद की खोज करो तब प्राप्त होगा। मैं प्रकाश और शब्द में उस वस्तु की खोज करता रहता हूं जो प्रकाश को देखती और शब्द को सुनती है। अभी समाधि में था। कहां था? उसी की खोज में था लेकिन उसका अन्त नहीं मिलता। वह है मगर उसका किसी को पता नहीं लगा। स्वामी जी ने उसको हैरत हैरत कहा, किसी ने उसको अनाम कहा और किसी ने अकाल कहा।

नाम रतन गुरु देयं बुझाई, 'उलट चढ़ो असमानी।

गुरु तुमको अन्तर जाने का मार्ग बताता है कि तुमने अभ्यास कैसे करना है। इसके सिवाय गुरु को जो कुछ और समझता है वह भूल में है। मैं तुमको धोखा नहीं दे रहा। मेरे पास लोगों के पत्र आते हैं। मेरा रूप उनके अन्तर प्रकट हो कर क्या २ करता है और मैं चकित होता हूं। एक का बच्चा मर गया। मैंने उसको लिखा कि घबराओ नहीं लड़का और हो जायेगा। मैंने तो उसको उत्साह दिया लेकिन मालिक की मोज उसके और लड़का हो गया। अब यदि मैं उसकी दी हुई वस्तु खा जाऊं तो मैं दोषी हूं क्योंकि मैंने तो उसको लड़का नहीं दिया। यदि मैं ही देने वाला होता तो मेरी लड़की को भी लड़का हो जाता हम लोगों को इन गुरुओं, धर्मों और पंथों ने सच्चाई वर्णन नहीं की। सबने हम गृहस्थियों को लूटा है। यदि बात सच हो गई तो मैं था और यदि बात झूठ हुई तो काल था। सब पाखण्ड का जाल है। इसलिए मैं अनामी धाम से संसार को सच्चाई बताने के लिए आया हूं। जो जहां से आता है उसको वहां की ही लगन होती है। क्योंकि मुझे अपने आदघर की लगन

है इसलिए मैं कहता हूं कि मैं अनामी धाम से आया हूं। आये तो सभी वहां से हैं। इसलिए मानव की सुरत सबसे पवित्र वस्तु है। अब तुमको क्या करना चाहिए ? जिस संसार में हम रहते हैं, सदा यह समझो कि हम यहां मुसाफिर हैं। कोई दस साल जिया, कोई बीस साल और कोई पचास या सौ साल जिया। यदि हर समय यह विचार रहे तो समझो कि तुमने जीवन की कम से कम एक तिहाई क़माई पूरी कर ली। जैसे अब तुम यहां आये हो और तुमको पता है कि तुमने अपने घर या अपने गांव वापिस चले जाना है। इसलिए तुमको यहां कोई लगाव नहीं होगा ऐसे ही यह विश्वास रखो कि हम यहां मुसाफिर हैं। इससे तुम ग़लती और बुरे कर्म कम करोगे। दूसरे जब तक इस संसार में तुम्हारा शरीर और मन है तब तक उन नियमों का पालन करो जिनसे तुम्हारा मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य बना रहे। प्रकृति के नियम भंग करना तुम्हारे हित में नहीं होगा। तुम मन में रहते हो। मन में बहुत शक्ति है। संकल्प में बहुत शक्ति है। इसलिए कभी बुरा विचार मत रखो। "शिव संकल्प

अस्तु" अपना, अपने परिवार का और सब का भला चाहो। किसी से घृणा द्वेष मत रखो। तब तुमको आगे जाने की इच्छा पैदा होगी और आगे जाने का अधिकार होगा। मानवता हमारे जीवन में है। मानव यह देखता है कि यह वस्तु मेरी है और यह मेरी नहीं है। जानवर यह नहीं देखता। इसलिए मानवता यह है कि मन के विचार ठीक रखो। अपने स्वस्थ्य का ध्यान रखो। अपने मन को सदा Watch करते रहो। हम धन के लिए परिश्रम करते हैं लेकिन जो दोगे वही मिलेगा। इसलिए जो तुम चाहते हो वह दिया करो। यह कर युग है कलयुग नहीं। यदि धन चाहते हो तो धन दिया करो, दुखियों की सहायता किया करो और परोपकार किया करो वरना तुम नाम के अधिकारी नहीं बन सकते। जो आदमी धोखा और फरेब करता है वह कभी नाम का अधिकारी नहीं बन सकता। नाम अमूल्य वस्तु है।

तुमलोग आ जाते हो। मैं अपनी ज़िम्मेदारी को महसूस करता हूं। मैं जब अकेला होता हूं तो मैं सोचा करता हूं कि फकीर! यह तुमने क्या मकड़ी का जाला बना रखा है। तू किसी के लिए क्या कर

सकता है ? मेरे पास शुभ भावना है और वह ज्ञान है जो मैंने जीवन में प्राप्त किया। मैं न किसी का उदाहरण देता हूं और न किसी की हां में हां मिलाता हूं और न कभी मिलाई है। मैं सोचा करता हूं कि तू गुरु बनके लोगों को उपदेश करता है क्या तेरे दुख चले गये ? जिस ढंग से मेरे गये वह मैंने आपको बता दिया। बाकी कर्म तो सबको भोगना ही पड़ता है और जो होना है वह होके ही रहेगा। अब मुझे अपने रूप का ज्ञान हो गया। अब अकह, अपार, अगाध और अनाम या सर्वाधार के आगे शरणागत होता रहता हूं। प्रकाश देख लिया, शब्द सुन लिया। अब आगे कहां जाऊं। आगे जाने का यत्न करता हूं तो चुप हो जाता हूं। इसलिए शरणागत होता रहता हूं।

इतना काम करो तुम अबके, फिर आगे कि सतगुरु जानी।
राधास्वामी कहन सम्हारो, दुख छूटे सुख मिले निशानी।

दूसरे सन्तों का दुख कैसे जाता है ? पता नहीं। जो कर्म किये हुये हैं वे तो भुगतने ही पड़ेंगे। जबतक ज्ञान है तब तक कोई दुख नहीं और जब भूल जाता हूं तो मैं भी दुखी होता हूं। तुम मेरे भाई, हो बहनें हो

और बच्चे हो मुझे किसी बात का दावा नहीं। मैंने सच्चाई की तलाश में सारा जीवन व्यतीत किया है। यह राधास्वामी मत मेरे लिए एक समस्या थी। शब्दयोग से अनुभव पैदा होता है। यह बात हजूर दाता दयाल जी ने कही है कि जब तुम्हारे अन्तर बीन बजने लगे तो फिर किसी गुरु की तलाश करो। वह तुमको भेद बतलायेगा जो मैं बता रहा हूं। पिछले युग में यह भेद विशेष २ चेलों को बताया जाता था। मैंने ग़लती की जो इस भेद को खोल दिया। मगर मैं तो अपना कर्म भोगता हूं। आप लोगों पर मेरा कोई उपकार नहीं है।

पुरुषोतम दास ! तुम मेरे पुराने मित्र हो। मैं सोचता हूं कि जो अनुभव मैंने प्राप्त किया है इससे गुरु का रूप समाप्त होना चाहिए। क्यों ?

प्रेम गलि अति सांकड़ी ता में दो न समायें।

जब तक मैं हूं और मेरा गुरु है तब तक लक्ष्यपद नहीं है। हजूर दाता दयाल जो महाराज ने मुझे फरमाया था कि फकीर ! संसार में कुतब बनके रहना। कुतब ध्रुव तारा है जो एक जगह स्थित है और शेष सारा तारा मंडल उसके चारों ओर

घूमता है। ऐसे ही सन्त अपने रूप में कायम रहता है। वह न मन के पीछे दौड़ता है न प्रकाश के पीछे दौढ़ता है और न शब्द के पिछे फिरता है। ऐसे कुतब के दर्शन करने से स्वभाविक ही लाभ पहुचना चाहिए और पहुंचता है। उनकी बात की मुझे अब समझ आई है। उस समय न समझ सका। अपनी ज़ात में रहना ही कुतबपना है। हज़ूर दाता दयाल जी महाराज का मेरे नाम एक शब्द सुनो :-

फकीरा! जा भवसागर पारा।
जग है दुविधा जग दुचिताई, जग दूई व्यवहारा।
सुख दुख राग द्वेष विष अमृत, यह सव दून्द पसारा।

आगे चलकर वह लिखते है :-

गुरु से प्रेम बढ़ाया तू ने, गुरु चेला व्यवहारा।
गुरु चेला मिल एक भये जब, एक का मिला सहारा।

और अन्त में लिखते हैं :-

कट गई काल कर्म की फांसी, जन्म जुआ नहिं हारा।
राधास्वामी की बलिहारी, रहे फकीर सुखारा।

हज़ूर दाता दयाल जी महाराज की आज्ञानुसार कि चोला छोड़ने से पहले शिक्षा को बदल जाना या अपने कर्म भोग वश मैंने जो जीवन में अनुभव किया उसके अनुसार शिक्षा को बदला है। कुछ वर्ष हुये मैं

महलपुर (जिला होशियारपुर) गया। वहां बाबा जगतसिंह जी का चेला एक डाक्टर था। वह भी सत्संग में आया। सत्संग के बाद उसने मुझे बताया कि बाबा जगतसिंह जी महाराज ने कहा था कि जो कुछ हमने कहा है भविष्य में आने वाले सन्त इससे आगे कहेंगे। गोरखपुर के श्री काशीनाथ मुख़्तार ने भी मुझे बताया था कि एक बार हज़ूर दाता दयाल जी महाराज ने कहा था कि आगे आने वाले सन्त नीचे की मंजलों को छोड़कर सीधे ही भंवर गुफा से साधन आरम्भ करेगें। इसलिए मैंने जो कुछ कहा है यह अपने अनुभव के आधार पर कहा है और मेरी आत्मा यह कहती है कि मैं गलती में नहीं हूं।

सब को राधास्वामी

सत्गुरु की महिमा

लेखिक :—सेठ दुर्गादास साहिब चण्डीगढ़।

राधास्वामी। कबीर साहिब फरमाते हैं।

आग लगी असमान को, झर झर गिरे अंगार।
गर न होते जग में संत जन, जल मरता संसार।

कितनी सच्ची बात कह दी। फरमाते हैं, असमान को आग लगी हुई है और सारे असमान से अंगार अग्नि के गिर रहे हैं। संसार में हा-हा कार मची हुई है। दुख ओर विपतियें सहन कर रहे हैं। यदि संसार में सन्तों का अवतार न होता तो सारा संसार जल मरता। जो इनकी शरण में आया, बच गया।

संसार में अत्याचार हो रहा है। बदी अधिक है नेकी कम है। भलाई करने वाले कम है बुराई करने वाले ज्यादा हैं। बेईमान अधिक हैं ईमानदार कम हैं। पुन्यात्मा कम है शरारती ज्यादा हैं। ईश्वर को मानने वाले कम हैं नास्तिक अधिक हैं। इनके कर्म बताते हैं

कि आस्तिक भी नास्तिक हैं शाकाहारी संसार में कम हैं मांसाहारी अधिक हैं। दानी बहुत कम हैं कंजूस वहुत अधिक हैं। नेक कमाई पर निर्वाह करने वाले कम हैं लूट घसूट वाले अधिक हैं। संसार के सब धर्मों में ईश्बर को सर्वव्यापक समझने वाले बहुत कम हैं, वाचक ज्ञानी बहुत हैं। आदेश देने वाले अधिक हैं उपदेश को ग्रहण करने वाले बहुत कम हैं।

"पर उपदेशे पुरुप घनेरे, निज उपदेशे पुरुष थोड़े"।

मानवता बहुत कम है, अमानता अधिक है।

विषयासक्त बहुत हैं, शान्ति के पुजारी कम हैं।

क्या यह सच नहीं हैं कि जब संसार यह की दशा हो, जब अत्यचार बढ़ जाता है, हद से बढ़ जाता है तो संसार में भूंचाल आते हैं। तूफान आते हैं, बीमारियें फैल जाती हैं, लड़ाई होती है, खेती बाड़ी नष्ट हो जाती है। भूख मरी होती है काल भगवान का चक्कर चलता है। जगत विनाश को प्राप्त हो जाता है। मानव प्राण दे देते हैं।

ऐसे हालात जब पैदा हो जाते हैं उस समय सन्त का अवतार जगत की सहायता करता है। वह शान्ति का उपदेश देते हैं। जो जो इनकी शरण में आते हैं बे ऐसी घोर विपतियों से बच जाते हैं।

आजा मेरी शरण में बचालूंगा तुझे।

वे उपदेश देते है, तू अपने कर्म ठीक कर। ईश्वर को अंग संग जान कर कि वह तो हर समय तेरे पास रहता है, तेरे हर कर्म का साक्षी है, तू कर्म किया कर, यदि ऐसा करेगा तो बुरा कर्म न कर सकेगा। सम्भल जा। तेरा कल्याण, तेरी मुक्ति इसी में है।

सन्त अत्तृत रूपी बचन की वर्षा करते हैं और घबराये हुये जीवों की तपन बुझाते हैं। इनके मन को स्थिर करते हैं। इनकी चिन्ता को दूर करते है। दया भाव से कृपा दृष्टि से जीवों को उभारते हैं और भवजल के सागर से इनकी नैया को किनारे लगाते हैं।

जिनके भाग्य अच्छे होते हैं उनको सत्गुरु की शरन मिल जाती है। सत्गुरु भेद देते हैं। मार्ग दिखाते हैं, दुख हरते हैं और सुख देते हैं

सत्गुरु की महिमा अनन्त, अनन्त किया उपकार।

सत्गुरु से क्या मिलता है। कबीर साहिब फरमाते है :-

ज्ञान समागम प्रेम सुख, दया भक्ति विश्वास।
गुरु सेवा ते पाइऐ, सतपद धाम निवास।

पत्र व्यवहार द्वारा ज्ञान

प्यारे बरकत राम ! राधास्वामी ।

पत्र मिला । ९० साल की आयु के अनुभव के बाद कहता हूं कि प्राकृति के भेद का किसी भी महापुरुष को चाहे वह किसी मतमतान्तर का है, पता नहीं लगा । जितनी २ बुद्धि या अपनी खोज जहां तक पहुंची वे वर्णन कर गये ।

हम इस विज्ञान के युग में पैदा हुऐ हैं । मैं मालिक को मिलने निकला था । हमारी बुद्धि मानती है कि यदि सूर्य और सितारों की रोशनी न हो तो इस संसार में कोई भी चीज़ पैदा नहीं हो सकती । यह तो स्थूल प्रक्तित है । आखिर इन सूर्य चान्द सितारों को बनाने वाली भी कोई शक्ति है । यदि वह हो सकती है या होनी चाहिए तो वह एक प्रकार की अनरजी होगी और जहां अनरजी है वहां रौशनी और शब्द का होना आवश्यक है । असल मालिक या शक्ति या तत्व है जिसमें गति होकर प्रकाश और

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

शब्द पैदा होता है। तो यदि कोई व्यक्ति उस अपने आदघर अर्थात उस मालिक परमतत्व जिसको सन्त अनामी या अकाल पुरुष कहते हैं और शास्त्र परमतत्व कहते हैं या यह कहते हैं कि सत को असत ने ढक रखा है। यदि कोई वहां तक जाना चाहता है तो सिवाय इसके कि वह अपने अन्तर प्रकाश और शब्द से होकर गुज़रे वह अपने आदघर को नहीं जान सकता और न ही वहां जा सकता है। यह वर्तमान युग की बुद्धि मानती है।

मैं आपको कोई राय नहीं दे सकता। श्रेणियें हैं। हर एक आदमी सुरत शब्दयोग का अधिकारी भी नहीं है। इससे अधिक मैं आपको कुछ नहीं कह सकता। अब मैं अपने आपसे पूछता हूं कि फकीर चन्द! तुमको सुरत शब्द योग से क्या मिला? मैं अपने अन्तर प्रकाश को देखने और शब्द को सुनने के बाद उस वस्तु की तलाश करता हूं जो प्रकाश में रहती हुई प्रकाश को देखती है और शब्द में रहती शब्द को सुनती है उसका अन्त नहीं मिलता और जब कभी उसकी और मेरी सुरत जाती है तो मैं अपने आपको भूल जाता हूं। उस समय मुझे न अपनी होश,

न मालिक की होश, न गुरु की होश और न मैं न तू।

अच्छा बरकत राम ! मैं सोचता हूं कि क्या मैं कुछ बन गया ? नहीं। मैं न ही सही क्या दूसरे सन्त इतना साधन करने के बाद यदि कुछ बन गये तो क्या वे अपने कष्ट को दूर कर सके ? नहीं। हज़ूर बाबा सावनसिंह जी महाराज की क्या दशा हुई। स्वामी रामकृष्ण परम हंस कैंसर से मरे। ईसा मसीह सूली पर चढ़ाये गये। गुरु अर्जुन देव जी का क्या हाल हुआ और महात्माओं के हाल देखो। रामायण को लिखने वाले तुलसी दास जी जो सरगुण स्वरुप के कितने पुजारी थे और जिनकी रामायण ने हज़ारों आदमियों के जीवन बदल दिये। वह स्वयं पिछली आयु में तीन साल शारीरिक कष्ट से अति दुखी हुये। मेरा अपना क्या परिणाम हो। तो मैं किस नतीजे पर आया।

तेरी लीला कौन जाने तू तो अपरमपार है।

मैं तो यह समझता हूं कि वह अनर्जी का एक भण्डार है। उसमें से किरणें निकल निकलकर सृष्टि रचती हैं। केन्द्र बन जाते हैं। जिस प्रकार की प्रकृति

से किसी का शरीर बना है वह वैसा ही खेल करने के लिए विवश है। तो भई मैं तो समझता हूं कि मैं इस प्रकृति में एक छोटा सा कीड़ा हूं। जिस प्रकार हमारे अन्तर में रहने वाला कोई कीड़ा हमारे शरीर को नहीं जान सकता उसी प्रकार कोई मानव भी जोकि इस ब्रह्मण्ड में छोटा सा कीड़ा है प्रकृति को नहीं जान सकता। तो मेरी तलाश का परिणाम क्या निकला ? शरणागतम। जो उसकी इच्छा है वह करे। न मुक्ति की इच्छा न बन्धन का डर। यह मेरा परिणाम है क्योंकि मन चंचल है इसलिए इसकी चंचलताई को दूर करने के लिए सुमिरन ध्यान और भजन करता रहता हूं।

फकीर

पत्र नं० २

अमरीका (विरजीनियां)

भगत जी व सत्संगियो ! राधास्वामी

मैंने २९-६-७६ को देहली आना था, लेकिन श्री 'के एन शर्मा ने लन्दन में उतरने का प्रबन्ध किया है इसलिए मैं अब २७-६-७६ को यहां से चलकर लंदन उतरूंगा। वहां शायद एक सप्ताह ठहरूं।

और क्या लिखूं ? दाता का संस्कार रंग लाया, मैंने अभी दो सत्संग न्यूर्याक में २६ व २७ जून को देने हैं, कुछ रील टेप जो सत्संग दिये थे वह साथ ला रहा हूं। न्यूर्याक के सत्संग में कम से कम दो हजार आदमी होंगे।

ऐ मेरे आधार ! मेरे बनाने वाले ! तेरी तलाश के सिलसिले में मौज दाता दयाल जी महाराज के चरन कमलों में ले गयी, इन चरणों में मेरी जिन्दगी गुज़र गयी, जो हुकम आपने इस रूप के द्वारा दिया मैंने उसका पालन कर दिया। जो मैंने अनुभव किया, ऐ मालिक, वह कहां। शिक्षा वदल चला। दाता पता नहीं मैंने ठीक किया या ग़लत किया। अब यहीं

प्रार्थना है कि मेरी हस्ती को अपनी ज़ात से मिलाले। भगत जी ! दो महिने अमरीका में अच्छे गुज़र गये। मुझे पूर्ण यकीन है कि डाक्टर आई सी शर्मा स्वामीविवेका नन्द की तरह इस सच्चाई को जो वास्तव में सन्तों की तालीम है ज़ाहिर करेगा। यहां अमरीका में उसके कम से कम ७०० चेलें हैं। मन्दिर के लिए मकान ले लिया गया है, समय पर फैलेगा।

अखियां तरस रही, कब जाऊंगा अपने देश।
एक तो देखा विदेश अमरीका, दूजे सुरत का देश ऊपर।
रैन दिवस सुरत मेरी तरस रही, कब जाऊंगा अपने देश।
अखियां तरस रही।
इस देश के दुख सुख दोनों, कौन सहे नित कलेश।
अखियां तरस रही. कब जाऊंगा अपने देश।

फकीर

मेरा कर्म

कल सहायक मन्त्री मानवता मन्दिर ने फकीर लायब्रेरी चैरीटेबल ट्रस्ट का हिसाब दिखाया, उसने कहा कि आखों का हस्पताल खुलने के बाद मन्दिर के कुल व्यय के लिए कम से कम 135000/- रुपया की धन राशी प्रति वर्ष चाहिए। सुना, रात को अपने अन्तर सोचा की ऐ फकीर। तू ने यह क्या किया ? एक गढ़े से निकला और दूसरे कुऐ में गिरा। मगर अपना जीवन याद आता है। मुझको पचपन से ही किसी वस्तु की तलाश थी। वह तलाश मुझ को दाता दयाल महर्षि शिव ब्रत लाल जी महाराज के चरण कमलों में ले गई। उस पवित्र विभूति ने मेरी उस तलाश को मिटाने के लिए मुझ पतित और अज्ञानी जीव को छाती से लगाया। जीवन की प्रत्येक दिशा में मुझे उत्साह, सहारा और शक्ति दो। सत्य वस्तु, सच्चाई और शान्ति का रास्ता बताया। जब में पंथ में आया था और मैंने भी यह प्रण किया था कि अपना

अनुभव संसार को बता जाऊंगा और हजूर दाता दयाल जी महाराज ने फरमाया था कि चोला छोड़ने से पूर्व शिक्षा में परिवर्तन कर जाना। मुझे नहीं पता कि जो कुछ मैंने अनुभव किया वह ठीक है या ग़लत। आत्मा सत्य प्रिय है। जो कुछ मैंने गृहस्थि, शिष्य और गुरु होने की स्थिति में अनुभव किया वह मुझ को एक ऐसी अवस्था की ओर ले जा रहा है जहां न मैं, न तू, न गुरु, न चेला, न राम, न रहीम और न करीम। मगर अभी तक उस धुर धाम में मैं ठहर नहीं सकता। मालूम नहीं क्यों? मैं यह कहने में विवश हूं कि या तो मेरे कर्म या इस संसार की रचना करने वाले की इच्छा।

मेरे इस कर्म भोग वश मैंने इन्सान बनो की आवाज़ उठाई। धर्मों और पंथों में जो रोचक और भयानक बातें धर्म और पंथ चलाने के लिए और दुनियां को पीछे लगाने के लिए कही गई, उनको मैंने साफ कर दिया। समझ में आया की जब तक मनुष्य जीवन है वह परस्पर प्रेम, सहायता और सेवा के अधीन हैं। अध्यात्मिक जीवन भी नाम, ध्यान प्रकाश और शब्द का अधीन है। इसलिए मैंने मन्दिर में यथा

शक्ति अनाथों, अन्धों और ग़रीब विद्यार्थियों की सहायता करने का काम किया। आर्थिक हीन लोगों के लिये होमयौपैथिक दांतों और आंखों का हस्पताल खोला। कई जीव भ्रम और शंका ग्रस्त होते हैं, उन को अपने भविष्य अथवा भाग्य की चिन्ता होती है। इनके लिये ज्योतिष का प्रबन्ध किया। जो सज्जन साधन या अभ्यास करना चाहते हैं उनके लिए भी प्रबन्ध किया। मगर जब डिप्टी सैक्रेटरी ने मन्दिर का हिसाब बताया तो ख्याल आया कि इतना व्यय करना कठिन मालूम होता है। यदि मैं परदा रखता, जिस प्रकार मेरा रूप लोगों के अन्तर प्रकट होकर उनकी सहायता करता है, मरते समय ले जाता है और दवाईयें बताता है, भारत वर्ष में ही नहीं विदेशों में भी, तो जितना भी धन चाहता, मान चाहता, ले सकता था। मगर मेरी आत्मा ने नहीं माना।

मानव मन्दिर पत्रिका या अन्य कितने जो मानवता मन्दिर में छपती हैं मैंने उन का कोई मूल्य नहीं रखा। मन्दिर के हिसाब में प्रकाशन पर इस वर्ष दस महीनों में 27000/ रुपया व्यय हो चुका है। बिना मूल्य साहित्य बांटने का कारण मेरा ब्राह्मण के

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

घर का जन्म है। ब्राह्मण के लिए वेद बेचना पाप है। क्योंकि किताबों में जो कुछ लिखता हूं वह मेरा अनुभव है। इसलिए मैंने इस की कोई कीमत नहीं रखी। रात को सोचा कि माया के चक्कर में तो तू आ गया, अब बता तू क्या करेगा ? मेरा निर्णय यह है।

जो सज्जन मेरे साहित्य को पढ़ते हैं यदि उन की आत्मायें इस बात को मानती हैं कि मेरे इस काम द्वारा मानव जाति का भला हो सकता है तो वह मानवता मन्दिर की सहायता करें। मन्दिर में एक पैसा की हेरा-फेरी नहीं होती। ट्रस्ट है और विधिवत हिसाब है। जब तक इस सहायता से काम चलेगा चलायूंगा। अगर न चला तो हस्पताल बन्द कर दूंगा। दाता का हुकम है कि शिक्षा बदल जाना। मानव मन्दिर जारी रहेगा। यदि किसी कारण यह भी न चल सका तो मौज मलिक। दाता दयाल के ऋण से उतीर्ण हो जाऊंगा। इसलिये जो लोग मानव मन्दिर पढ़ते हैं उनसे यह मेरी हाथ जोड़ कर प्रार्थना है कि पत्रिका का प्रकाशन बढ़ रहा है। जिन की रुची इस के पढ़ने में न हो वह न मंगवायें।

ऐ मेरी जिन्दगी बनाने वाले ? मेरे हैपने को बनाने वाले। तेरा प्रेम था । मालूम नहीं मैंने जो कुछ किया अथवा समझा, ठीक है या ग़लत है । मैं शरणागत हूं। जिस रास्ते तेरी मौज है उसी रास्ते से मुझे ले चल । अब उस दिन की प्रतीक्षा करता हूं जब अपनी हस्ती को खोकर उसी परम तत्व में चला जाऊं ।

फकीर ।

शोक समाचार

हम यह समाचार बड़े खेद के साथ दे रहे हैं कि मानवता मन्दिर के परम हतैषी श्री देवी चरन मित्तल मनुष्य बनो के सम्पादक, जिन्होंने हज़ूर परम दयाल जी महाराज की शिक्षा के प्रचार में बहुत बड़ा सहयोग दिया २९-६-७६ को चोला छोड़ गये।

मालिक से प्रार्थना है कि उन की आत्मा को सद्गति प्रदान करे और उन के परिवार को उन का वियोग सहन करने की शक्ति दें।

सेक्रेट्री

मानवता मन्दिर

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

सूचना

मानव मन्दिर के प्रेमियों को सूचित किया जाता है कि आगामी अंक जोकि उन को सतम्बर १९७६ में भेजा जायेगा उस में 'मेरी अमरीका यात्रा' के शीर्षक से हज़ूर परम दयाल जी महाराज के वे प्ररचन छप रहे हैं जो कि उन्होंने अपने दौरा पर अमरीका निवासियों को सम्बोधित करते हुए मानव मात्र को चेतावनी के रूप में दिये। यह प्रवचन उस उद्देश की पूर्ति के लिये एक कड़ी है जिस के लिये महाराज जी का इस संसार में अवतरण हुआ अथवा यह प्रवचन मानव जाति के लिये सच्चाई का संदेश है। अगले अंक का इन्तज़ार करें।

सेक्रेट्री

मानवता मन्दिर

Regd. No. 26265/74

MANAV MANDIR

P—Hsp—7.

1283

ADDRESS

To

Sri A. Hanmanth Rao.

H. No:— 103— 194/8

Humayun Nagar Hyderabad 28

500028 A.P.

From :

MANAVTA MANDIR
SUTEHRI ROAD,
HOSHIARPUR.